श्रीमद् भागवत का यह सार
भगवद् भक्ति ही आधार

श्रीमद्भागवत रसिक कुटुंब

वेणु गीत

सुध बुध खोकर हुई बावरी, सुन मुरली की मधुर तान।
कृष्ण मिलन की आशा प्रकटी, ऐसा निर्मल वेणु गान ।।

नारायणं(न्) नमस्कृत्य, नरं(ञ्) चैव नरोत्तमम्।
देवीं(म्) सरस्वतीं(वँ) व्यासं(न्), ततो जयमुदीरयेत्

नामसङ्कीर्तनं(यँ) यस्य, सर्वपापप्रणाशनम्।
प्रणामो दुःखशमनस्, तं(न्) नमामि हरिं(म्) परम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

दशमः स्कन्धः

॥ अथैकविंशोऽध्यायः ॥

श्रीशुक उवाच

इत्थं(म्) शरत्स्वच्छजलं(म्), पद्माकरसुगन्धिना ।
न्यविशद् वायुना वातं(म्), सगोगोपालकोऽच्युतः ॥ 1 ॥

शरत्+ स्वच्छ+ जलं(म्), सगो+ गोपा+ लकोऽच्युतः

श्रीशुकदेवजी कहते हैं-परीक्षित शरद ऋतु के कारण वह वन बड़ा सुन्दर हो रहा था। जल निर्मल था और जलाशयों में खिले हुए कमलों की सुगन्ध से सन कर वायु मन्द मन्द चल रही थी। भगवान् श्रीकृष्ण ने गौओं और ग्वाल बाले कि साथ उस वनमें प्रवेश किया।

कुसुमितवनराजिशुष्मिभृं(ङ्)ग-

द्विजकुलघुष्टसरः(स्)सरिन्महीध्रम् ।

मधुपतिरवगाह्य चारयन् गाः(स्),

सहपशुपालबलश्चुकूज वेणुम् ॥ 2॥

कुसुमि+ तवनरा+ जिशुष्मि+ भृं(ङ्)ग, द्विजकु+ लघुष्ट+ सरः(स्)

सरिन्+ महीध्रम्, मधुपति+ रवगाह्य , सहपशुपा+ लबलश्+ चुकूज

सुन्दर सुन्दर पुष्पों से परिपूर्ण हरी-हरी वृक्ष पंक्तियों में मतवाले और स्थान-स्थान पर गुनगुना रहे थे और तरह तरह के पक्षी झुंड के झुंड अलग अलग कलरव कर रहे थे, जिस से उस वन के सरोवर, नदियाँ और पर्वत सब के सब गूंजते रहते थे। मधु पति श्रीकृष्ण ने बलराम जी और ग्वालबालों के साथ उसके भीतर घुस कर गौओं को चराते हुए अपनी बाँसुरी पर बड़ी मधुर तान छेड़ी।

तद् व्रजस्त्रिय आश्रुत्य, वेणुगीतं(म्) स्मरोदयम् ।

काश्चित् परोक्षं(ङ्) कृष्णस्य, स्वसखीभ्योऽन्ववर्णयन् ॥ 3॥

स्वसखी+ भ्योऽन्+ ववर्णयन्

श्रीकृष्ण की वह वंशीध्वनि भगवान् के प्रति प्रेमभाव को, उनके मिलन को आकाङ्क्षा को जगाने वाली थी। वे एकान्त में अपनी सखियों से उनके रूप, गुण और वंशोध्वनिक प्रभाव का वर्णन करने लगीं।

तद् वर्णयितुमारब्धाः(स्), स्मरन्त्यः(ख्) कृष्णचेष्टितम् ।

नाशकन् स्मरवेगेन, विक्षिप्तमनसो नृप ॥ 4॥

वर्ण+ यितुमा+ रब्धाः(स्), कृष्ण+ चेष्टितम् , स्म+ रवेगेन , विक्षिप्+ तमनसो

व्रजकी गोपियो ने वंशीध्वनि का माधुर्य आपस में वर्णन करना चाहा तो अवश्य; परन्तु वंशी का स्मरण होते ही उन्हें श्रीकृष्ण को मधुर की प्रेमपूर्ण चितवन,भौहो के इशारे और मधुर मुस्कान आदि की याद हो आयी। उनकी भगवान्से मिलने की आकाङ्क्षा और भी बढ़ गयी। उनका मन हाथ से निकल गया। वे मन-ही-मन वहाँ पहुँच गयीं, जहाँ श्रीकृष्ण थे। अब उनकी वाणी बोले कैसे ? वे उसके वर्णन में असमर्थ हो गयीं।

बर्हापीडं(न्) नटवरवपुः(ख्) कर्णयोः(ख्) कर्णिकारं(म्),

बिभ्रद् वासः(ख्) कनककपिशं(वँ) वैजयन्तीं(ञ्) च मालाम् ।

रन्ध्रान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दैर्-

*वृ*न्दा*र*ण्यं(म्) स्वपदरमणं(म्) प्राविशद् गीतकीर्तिः ॥ 5॥

वेणो+ रध+ रसुधया

श्रीकृष्ण ग्वालबालों के साथ वृन्दावन में प्रवेश कर रहे हैं। उनके सिर पर मयूरपिच्छ है और कानों पर कनेर के पीले-पीले पुष्पः शरीर पर सुनहला पीताम्बर और गले में पाँच प्रकार के सुगन्धित पुष्पों की बनी वैजयन्ती माला है। रंगमञ्च पर अभिनय करते हुए श्रेष्ठ नट का सा क्या ही सुन्दर वेष है। बांसुरी के छिद्रों को वे अपने अधरामृत से भर रहे हैं। उनके पीछे-पीछे ग्वालबाल उनको लोकपावन कीर्तिका गान कर रहे हैं। इस प्रकार वैकुण्ठ से भी श्रेष्ठ वह वृन्दावन धाम उनके चरणचिहों से और भी रमणीय बन गया है।

इति वेणुरवं(म्) राजन्, सर्वभूतमनोहरम् ।

श्रु*त्वा व्रजस्त्रियः(स्) सर्वा, वर्णयन्त्योऽभिरेभिरे ॥ 6॥

वर्ण+ यन्त्योऽ+ भिरेभिरे

परीक्षित् यह वंशीध्वनि जड, चेतन समस्त भूतों का मन चुरा लेती है। गोपियों ने उसे सुना और सुन कर उसका वर्णन करने लगीं। वर्णन करते-करते वे तन्मय हो गयीं और श्रीकृष्ण को पाकर आलिङ्गन करने लगी।

गोप्य ऊचुः

अ*क्ष*ण्वतां(म्) फलमिदं(न्) न परं(वँ) विदामः(स्),

स*ख्यः(फ्) पशूननु विवेशयतोर्वय*स्यैः ।

वक्त्रं(वँ) व्रजेशसुतयोरनुवेणु जु*ष्टं(यँ),

यैर्वा निपीतमनुर*क्तकटाक्षमोक्षम् ॥ 7॥

अक्षण्+ वतां(म्), विवे+ शयतोर्+ वयस्यैः,

व्रजे+ शसुतयो+ रनुवेणु , निपी+ तमनुरक्त+ कटाक्षमोक्षम्

गोपियाँ आपस में बात चीत करने लगी- अरी सखी। हमने तो आँखोंवाले के जीवन की और उनकी आँखो की बस, यही इतनी ही सफलता समझी है; और तो हमें कुछ मालूम ही नहीं है। वह कौन-सा लाभ है ? वह यही है कि जब श्याम सुन्दर श्रीकृष्ण और गौरसुन्दर बलराम ग्वालबालों के साथ गायों को हाँक कर वन में ले जा रहे हों या लौटा कर जला रहे हों, उन्होंने अपने अधरों पर मुरली धर रखी हो और प्रेम भरी तिरछी चित वन से हमारी ओर देख रहे हों, उस समय हम उनकी मुख-माधुरी का पान करती रहीं।

चूत*प्रवालब*र्हस्तबकोत्पलाब्ज-

मालानुपृ*क्तपरिधानविचि*त्रवेषौ ।

म*ध्ये विरेजतुरलं(म्) पशुपालगोष्ठ्यां(म्),

रं(ङ्)गे यथा नटवरौ क्व च गायमानौ ॥ 8॥

चूत+ प्रवा+ लबर्हस् + तब+ कोत्+ पलाब्ज,

माला+ नुपृक्त+ परिधा+ नविचित्र+ वेषौ, पशुपा+लगोष्ठ्यां(म्)

अरी सखी जब वे आमकी नयी कोंपलें, मोरों के पंख, फूलों के गुच्छे, रंग-बिरंगे कमल और कुमुद की मालाएं धारण कर लेते हैं, श्रीकृष्ण के साँवरे शरीर पर पीताम्बर और बलराम के गोरे शरीर पर नीलाम्बर फहराने लगता है, तब उनका वेष बड़ा ही विचित्र बन जाता है। ग्वालबालों की गोष्ठीमें वे दोनों बीचो बीच बैठ जाते हैं और मधुर सङ्गीत को तान छेड़ देते हैं। मेरी प्यारी सखी! उस समय ऐसा जान पड़ता है मानो दो चतुर नट रंगमञ्च पर अभिनय कर रहे हों। मैं क्या बताऊँ कि उस समय उनकी कितनी शोभा होती है।

गोप्यः(ख्) किमाचरदयं(ङ्) कुशलं(म्) स्म वेणुर्-

दामोदराधरसुधामपि गोपिकानाम् ।

भुङ्क्ते स्वयं(यँ) यदवशि*ष्टरसं(म्) ह्रदि*न्यो,

हृ*ष्यत्त्वचोऽश्रुमुमुचु*स्तरवो यथाऽऽर्याः ॥ 9॥

किमा+ चरदयं(ङ्), दामोदरा+ धरसुधा+ मपि

यदव+ शिष्टरसं(म्), हृष्यत्+ त्वचोऽ+ श्रुमुमुचुस्+ तरवो

अरी गोपियो यह वेणु पुरुष जाति का होने पर भी पूर्वजन्म में न जाने ऐसा कौन-सा साधन-भजन कर चुका है कि हम गोपियों की अपनी सम्पत्ति दामोदर के अधरों की सुधा स्वयं ही इस प्रकार पिये जा रहा है कि हम लोगों के लिये थोड़ा-सा भी रस शेष नहीं रहेगा। इस वेणु को अपने रस से सींचने वाली ह्रदिनियाँ आज कमलों के मिस रोमाञ्चित हो रही है और अपने वंश में भगवत्प्रेमी सन्तानो को देख कर श्रेष्ठ पुरुषों के समान वृक्ष भी इसके साथ अपना सम्बन्ध जोड़ कर आँखों से आनन्दाश्रु बहा रहे हैं।

वृ*न्दावनं(म्) सखि भुवो वितनोति कीर्तिं(यँ),

यद् देवकीसुतपदाम्बुजल*ब्धलक्ष्मि ।

गोवि*न्दवेणुमनु मत्तमयूरनृ*त्यं(म्),

प्रेक्ष्याद्रिसान्वपरतान्यसम*स्तसत्त्वम् ॥ 10॥

देवकी+ सुतपदाम्+ बुजलब्ध+ लक्ष्मि , मत्+ तमयू+ रनृत्यं(म्)

प्रेक्ष्या+ द्रिसान्+ वपरतान्+ यसमस्+ तसत्त्वम्

ध*न्याः(स्) स्म मूढमतयोऽपि हरि*ण्य एता,

या न*न्दन*न्दनमुपात्तविचि*त्रवेषम् ।

आकर्ण्य वेणुरणितं(म्) सहकृ*ष्णसाराः(फ्),

पूजां(न्) दधुर्विरचितां(म्) प्रणयावलोकैः ॥ 11॥

मूढ+ मतयोऽपि, नन्दनन्द+ नमुपात्+ तविचित्रवेषम्

वेणु+ रणितं(म्), दधुर्+ विरचितां(म्), प्रणया+ वलोकैः

अरी सखी यह वृन्दावन वैकुण्ठ लोक तक पृथ्वी को कीर्ति का विस्तार कर रहा है। क्योंकि यशोदा नन्दन श्रीकृष्ण के चरण कमलों के चिह्नों से यह चिह्नित हो रहा है! सखि ! जब श्रीकृष्ण अपनी मुनिजन मोहिनी मुरली बजाते हैं, तब मोर मतवाले हो कर उसकी ताल पर नाचने लगते हैं। यह देख कर पर्वत की चोटियों पर विचर ने वाले सभी पशु-पक्षी चुप चाप शान्त हो कर खड़े रह जाते हैं। अरी सखी! जब प्राण वल्लभ श्रीकृष्ण विचित्र वेष धारण करके बाँसुरी बजाते हैं, तब मूढ़ बुद्धि वाली ये हरिनियाँ भी वंशी की तान सुन कर अपने पति कृष्ण सार मृगों के साथ नन्दनन्दन के पास चली आती हैं और अपनी प्रेमभरी बड़ी-बड़ी आँखो से उन्हें निरखने लगती हैं। निरखती क्या हैं, अपनी कमल के समान बड़ी-बड़ी आँखें श्रीकृष्ण के चरणों में निछावर कर देती है और श्रीकृष्ण की प्रेम भरी चितवन के द्वारा किया हुआ अपना सत्कार स्वीकार करती है। वास्तव में उनका जीवन धन्य है !

कृ*ष्णं(न्) निरीक्ष्य वनितोत्सवरूपशीलं(म्),

श्रु*त्वा च तत्क्वणितवेणुविचि*त्रगीतम् ।

देव्यो विमानगतयः(स्) स्मरनुन्नसारा,

भ्र*श्यत्प्रसूनकबरा मुमुहुर्विनीव्यः ॥ 12॥

वनितोत्+ सवरू+ पशीलं(म्), तत्+ क्वणि+ तवे+ णुविचित्रगीतम्

विमा+ नगतयः(स्), स्मरनुन्+ नसारा , भ्रश्यत्+ प्रसू+ नकबरा ,मुमुहुर्+ विनीव्यः

अरी सखी। हरिनियों की तो बात ही क्या है- स्वर्ग की देवियाँ जब युवतियों को आनन्दित करने वाले सौन्दर्य और शील के खजाने श्रीकृष्ण को देखती हैं और बाँसुरी पर उनके द्वारा गाया हुआ मधुर संगीत सुनती हैं, तब उनके चित्र-विचित्र आलाप सुन कर वे अपने विमान पर ही सुध-बुध खो बैठती है मूर्च्छित हो जाती हैं। यह कैसे मालूम हुआ सखी? सुनो तो, जब उनके हृदय में श्रीकृष्ण से मिलने की तीव्र आकाङ्क्षा जग जाती है तब वे अपना धीरज खो बैठती हैं, बेहोश हो

जाती हैं; उन्हें इस बात का भी पता नहीं चलता कि उनकी चोटियों में गुंथे हुए फूल पृथ्वी पर गिर रहे हैं। यहाँ तक कि उन्हें अपनी साड़ी का भी पता नहीं रहता, वह कमर से खिसक कर जमीन पर गिर जाती है।

गावश्च कृष्णमुखनिर्गतवेणुगीत-

पीयूषमुत्तभितकर्णपुटैः(फ्) पिबन्त्यः ।

शावाः(स्) स्नुतस्तनपयः(ख्)कवलाः(स्) स्म तस्थुर्-

गोविन्दमात्मनि दृशाश्रुकलाः(स्) स्पृशन्त्यः ॥ 13॥

कृष्णमुख+ निर्गत+ वेणुगीत, पीयू+ षमुत्तभित+ कर्णपुटैः(फ्)

स्नुतस्+ तनपयः(ख्), गोविन्+ दमात्मनि , दृशा+ श्रुकलाः(स्)

अरी सखी! तुम देवियों की बात क्या कह रही हो, इन गौओंको नहीं देखती ? जब हमारे कृष्ण प्यारे अपने मुख से बाँसुरी में स्वर भरते हैं और गौएँ उनका मधुर संगीत सुनती हैं, तब ये अपने दोनों कानों के दोने सम्हाल लेती हैं-खड़े कर लेती हैं और मानो उनसे अमृत पी रही हों, इस प्रकार उस सङ्गीत का रस लेने लगती हैं? ऐसा क्यों होता है सखी? अपने नेत्रों के द्वार से श्यामसुन्दर को हृदय में ले जाकर वे उन्हें वहीं विराज मान कर देती हैं और मन-ही-मन उनका आलिङ्गन करती हैं। देखती नहीं हो, उनके नेत्रों से आनन्द के आंसू छलकने लगते हैं और उनके बछड़े, बछड़ों की तो दशा ही निराली हो जाती है। यद्यपि गायों के थनों से अपने-आप दूध झरता रहता है, वे जब दूध पीते-पीते अचानक ही वंशीध्वनि सुनते हैं, तब मुँह में लिया हुआ दूध का घूँट न उगल पाते हैं और न निगल पाते हैं। उनके हृदय में भी होता है भगवान् का संस्पर्श और नेत्रों में छलकते होते हैं आनन्द के आँसू वे ज्यों-के-त्यों ठिठ के रह जाते हैं।

प्रायो बताम्ब विहगा मुनयो वनेऽस्मिन्,

कृष्णेक्षितं(न्) तदुदितं(ङ्) कलवेणुगीतम् ।

आरुह्य ये द्रुमभुजान् रुचिरप्रवालान्,

शृण्वन्त्यमीलितदृशो विगतान्यवाचः ॥ 14।

रुचिर+ प्रवालान् , शृण्वन्त्य+ मीलि+ तदृशो , विगतान्+ यवाचः

अरी सखी! गोएँ और बछड़े तो हमारी घर को वस्तु हैं। उनकी बात तो जाने ही दो वृन्दावन के पक्षियों को तुम नहीं देखती हो ! उन्हें पक्षी कहना ही भूल है। सच पूछो तो उनमें से अधिकांश बड़े-बड़े ऋषि-मुनि हैं। वे वृन्दावन के सुन्दर सुन्दर वृक्षों की नयी और मनोहर कोंपलों वाली डालियों पर चुपचाप बैठ जाते है और आँखें बंद नहीं करते, निर्निमेष नयनों से श्रीकृष्ण की रूप-माधुरी तथा प्यारभरी चितवन देख-देख कर निहाल होते रहते हैं, तथा कानों से अन्य सब प्रकार

के शब्दों को छोड़ कर केवल उन्हींकी मोहनी वाणी और वंश का त्रिभुवन मोहन सङ्गीत सुनते रहते हैं। मेरी प्यारी सखी उनका जीवन कितना धन्य है।

नद्यस्तदा तदुपधार्य मुकुन्दगीत-

मावर्तलक्षितमनोभवभग्नवेगाः ।

आलिं(ङ्)गनस्थगितमूर्मिभुजैर्मुरारेर्-

गृह्णन्ति पादयुगलं(ङ्) कमलोपहाराः ॥ 15॥

तदु+ पधार्य, मावर्+ तलक्षि+ तमनो+ भवभग्+ नवेगाः

आलिं(ङ्)गनस्+ थगितमूर्+ मिभुजैर्+ मुरारेर्, कमलो+ पहाराः

अरी सखी! देवता गौओ और पक्षियों की बात क्यों करती हो ? वे तो चेतन है। इन जड़ नदियों को नहीं देखती ? इनमें जो भँवर दीख रहे हैं, उनसे इनके हृदय में श्यामसुन्दर से मिलने की तीव्र आकांक्षा का पता चलता है? उसके वेग से ही तो इनका प्रवाह रुक गया है। इन्होंने भी प्रेम स्वरूप श्रीकृष्ण की सुन ली है। देखो देखो ये अपनी तरंगों के हाथों से उनके चरण पकड़ कर कमल के फूलों का उपहार चढ़ा रही हैं और उनका आलिङ्गन कर रही हैं, मानो उनके चरणों पर अपना हृदय ही निछावर कर रही है।

दृष्ट्वाऽऽतपे व्रजपशून् सह रामगोपैः(स्),

सं(ञ्)चारयन्तमनु वेणुमुदीरयन्तम् ।

प्रेमप्रवृद्ध उदितः(ख्) कुसुमावलीभिः(स्),

सख्युर्व्यधात् स्ववपुषाम्बुद आतपत्रम् ॥ 16॥

सं(ञ्)चा+ रयन्+ तमनु वेणुमुदी+ रयन्तम्

कुसुमा+ वलीभिः(स्), सख्युर्+ व्यधात् , स्व+ वपुषाम्+ बुद

अरी सखी! ये नदियाँ तो हमारी पृथ्वी को, हमारे वृन्दावन को वस्तुएँ हैं; तनिक इन बादलों को भी देखो। जब ये देखते है कि ब्रजराज कुमार श्रीकृष्ण और बलराम जी ग्वालबालों के साथ धूप में गौएँ चरा रहे हैं और साथ साथ बाँसुरी भी बजाते जा रहे हैं, तब उनके हृदय में प्रेम उमड़ आता है। वे उनके ऊपर मँडराने लगते हैं और वे श्यामघन अपने सखा घनश्याम के ऊपर अपने शरीर को ही छाता बनाकर तान देते हैं। इतना ही नहीं सखी! वे जब उन पर नन्हीं-नन्हीं फूहियों की वर्षा करने लगते है, तब ऐसा जान पड़ता है कि वे उनके ऊपर सुन्दर-सुन्दर श्वेत कुसुम चढ़ा रहे हैं। नहीं सखी, उनके बहाने वे तो अपना जीवन ही निछावर कर देते हैं!

पूर्णाः(फ्) पुलिन्द्य उरुगायपदाब्जराग-

श्रीकुं(ङ्)कुमेन दयितास्तनमण्डितेन ।

तद्दर्शनस्मररुजस्तृणरूषितेन,

लिम्पन्त्य आननकुचेषु जहुस्तदाधिम् ॥ 17॥

उरुगा+ यपदाब्+ जराग, दयितास्+ तन+ मण्डितेन

तद्दर्शनस्+ मररुजस्+ तृणरूषितेन ,जहुस्+ तदाधिम्

अरो भटू ! हम तो वृन्दावन की इन भीलनियों को हो धन्य और कृतकृत्य मानती है। ऐसा क्यों सखी ? इसलिये कि इसके हृदय में बड़ा प्रेम है। जब ये हमारे कृष्ण-प्यारे को देखती हैं, तब | इनके हृदय में भी उनसे मिलने की तीव्र आकाङ्क्षा जाग उठती है। इनके हृदय में भी प्रेम की व्याधि लग जाती है। उस समय ये क्या उपाय करती हैं, यह भी सुन लो हमारे प्रिय तम की प्रेयसी गोपियाँ अपने वक्षःस्थलों पर जो केसर लगाती हैं, वह श्यामसुन्दर के चरणों में लगी होती है और वे जय वृन्दावन के घास-पात पर चलते हैं, तब उनमें भी लग जाती है। ये सौभाग्यवती भीलनियाँ उन्हें उन तिनको पर से छुड़ा कर अपने स्तनों और मुखों पर मल लेती हैं और इस प्रकार अपने हृदय की प्रेम-पीड़ा शान्त करती हैं।

हन्तायमद्रिरबला हरिदासवर्यो,

यद् रामकृष्णचरणस्पर्शप्रमोदः ।

मानं(न्) तनोति सहगोगणयोस्तयोर्यत्,

पानीयसूयवसकन्दरकन्दमूलैः ॥ 18॥

हन्ता+ यमद्रि+ रबला, रामकृष्णचरण+ स्पर्शप्रमोदः

सहगो+ गणयोस्+ तयोर्यत् , पानीयसू+ यवसकन्+ दरकन्+ दमूलैः

अरी गोपियो ! यह गिरिराज गोवर्द्धन तो भगवान् के भक्तोंमें बहुत ही श्रेष्ठ है। धन्य है इसके भाग्य ! देखती नहीं हो, हमारे प्राण वल्लभ श्रीकृष्ण और नयनाभिराम बलराम के चरण कमलो का स्पर्श प्राप्त करके यह कितना आनन्दित रहता है। इसके भाग्य की सराहना कौन करे ? यह तो उन दोनों का ग्वालबालो और गौओं का बड़ा ही सत्कार करता है। खान-पान के लिये झरनो का जल देता है, गौओं के लिये सुन्दर हरी-हरी घास प्रस्तुत करता है विश्राम करने के लिये कन्दराएँ और खाने के लिये कन्द-मूल फल देता है। वास्तव में यह धन्य है !

गा गोपकैरनुवनं(न्) नयतोरुदार-

वेणुस्वनैः(ख्) कलपदैस्तनुभृत्सु सख्यः ।

अस्पन्दनं(ङ्) गतिमतां(म्) पुलकस्तरूणां(न्),

निर्योगपाशकृतलक्षणयोर्विचित्रम् ॥ 19॥

गोपकै+ रनुवनं(न्),कल+ पदैस्+ तनुभृत्सु

पुलकस्+ तरूणां(न्), निर्यो+ गपाशकृतल+ क्षणयोर् + विचित्रम्

अरी सखी! इन साँवरे गोरे किशोरों की तो गति ही निराली है। जब वे सिर पर नोवना लपेट कर और कंधों पर फंदा रख कर गायों को एक वन से दूसरे वन में कर ले जाते हैं. साथ मे ग्वालबाल भी होते हैं और मधुर-मधुर संगीत गाते हुए बाँसुरी को तान छेड़ते हैं, उस समय मनुष्यों की तो बात ही क्या, अन्य शरीर धारियों में भी चलने वाले चेतन पशु-पक्षी और जड़ नदीआदि तो स्थिर हो जाते हैं तथा अचल-वृक्षों को भी रोमाञ्च हो आता है। जादूभरी वंशी का और क्या चमत्कार सुनाऊँ?

एवं(वँ)विधा भगवतो, या वृन्दावनचारिणः ।

वर्णयन्त्यो मिथो गोप्यः(ख्), क्रीडास्तन्मयतां(यँ) ययुः ॥ 20॥

वर्ण+ यन्त्यो, क्रीडास्+ तन्मयतां(यँ)

परीक्षित्! वृन्दावन विहारी श्रीकृष्ण की ऐसी-ऐसी एक नहीं, अनेक लीलाएँ हैं। गोपियाँ प्रतिदिन आपस में उनका वर्णन करतीं और तन्मय हो जातीं। भगवान् की लीलाएँ उनके हृदय में स्फुरित होने लगतीं।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहं(म्)स्यां(म्) सं(म्)हितायां(न्)

दशमस्कन्धे पूर्वार्धे वेणुगीतं(न्) नामैकविंशोऽध्यायः ॥

ॐ पूर्णमदः(फ्) पूर्णमिदं(म्)पूर्णात्पूर्णमुदच्यते

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

ॐ शान्तिः(श्)शान्तिः(श्)शान्तिः॥